इकाई 1 उपनिवेशवाद का भारतीय शिक्षा पर प्रभाव

संरचना

1.0 प्रस्तावना

1.1 उद्देश्य

1.2 उपनिवेशी शिक्षा

1.3 देशी शिक्षा

1.4 शिक्षा नीति पर वादविवाद

1.5 अंग्रेज़ी शिक्षा का विकास

1.6 एक मूल्यांकन

1.7 सारांश

1.8 शब्दावली

1.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.10 उपयोगी पठन सामग्री

1.0 प्रस्तावना

भारत पर अंग्रेजी राज्य क्षेत्रीय नियंत्रण की स्थापना, जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में परिवर्तन लाई। शिक्षा एक ऐसा क्षेत्र था, जिसमें अंग्रेजों को शक्ति के हस्तांतरण से बहुत परिवर्तन आए। क्यों और कैसे यह परिवर्तन आए? इस परिवर्तन का क्या प्रभाव था? ये कुछ बड़े प्रश्न हैं, जिन पर इस इकाई में चर्चा की गई है। अंग्रेज़ी शिक्षा के विकास पर जो ब्रिटिश नीति का प्रभाव है, इसकी चर्चा भी इस इकाई में की गई है। इस इकाई में देश की देशी शिक्षा की पद्धति पर और प्राच्यवादियों तथा आंग्लवादियों के बीच विवाद पर भी चर्चा की गई।

1.1 उद्देश्य

इस इकाई में आपको उन प्रयोगों का परिचय देने का प्रयास किया गया है जो सन् 1757–1857 की अवधि के दौरान भारत में शिक्षा के क्षेत्र में अंग्रेजी सरकार ने किए। इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आपः

- उपनिवेशवाद और शिक्षा के बीच बदलते हुए संबंध स्थापित कर सकेंगे;
- शिक्षा की देशी पद्धति की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे;
- शिक्षा नीति पर वाद–विवाद में भाग ले सकेंगे;
- ब्रिटिश नीति का प्रभाव और पश्चिमी शिक्षा के फैलाव का अनुभव कर सकेंगे; और
- आधुनिक भारत में नई शिक्षा पद्धति का महत्व समझ सकेंगे।

1.2 उपनिवेशी शिक्षा

उपनिवेशी शासन के अधीन शिक्षा का विकास समझने के लिए शिक्षा और उपनिवेशवाद के बीच संबंधों की गतिशीलता समझना आवश्यक है। मार्टिन कार्नोय जैसे अन्य लेखकों

ने तर्क दिए हैं कि एक उपनिवेशी देश में शिक्षा उपनिवेशी शासकों के प्रभुत्व के वैद्यीकरण और अपनी स्वयं की आर्थिक आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए तैयार की जाती है।

उपनिवेशी देश पर आर्थिक और राजनीतिक नियंत्रण उपनिवेशी शासन को जीवित बनाये रखने के लिए आवश्यक है और शिक्षा को इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रयुक्त किया जाता है। शिक्षा के माध्यम से उपनिवेशी शासन के नये मूल्यों और औचित्यों को विकसित करने के प्रयास किए गए हैं। इस प्रकार शिक्षा अपनी स्वतंत्र पहचान खो देती है और राजनीतिक सत्ता की अधीनस्थ हो जाती है। उपनिवेशी शिक्षा निस्संदेह उपनिवेशी देश में परिवर्तन और सांस्कृतिक रूपांतरण लाती है। नए विचार और प्रयोग निश्चय ही विद्यमान ज्ञान को समृद्ध करते हैं, परंतु उपनिवेशी देश को इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ती है। उपनिवेशी शिक्षा के वास्तविक लाभभोगी कुछ चुनिन्दा व्यक्ति ही होते हैं जिनकी उपनिवेशी शासन को बनाये रखने में उपनिवेशी शासकों द्वारा सौंपी गई निश्चित भूमिका होती थी। उपनिवेशी शिक्षा का उद्देश्य उपनिवेशी देश के विकास के बदले उसका बेहतर नियंत्रण है। इस नीति का अंतिम परिणाम भिन्न हो सकता है परंतु वांछित उद्देश्य है उपनिवेशी देश का "नियंत्रण" न कि "परिवर्तन करना"।

उपनिवेशी शासन और शिक्षा के बीच संबंध की गतिशीलता के बारे में इस विचार की पृष्ठभूमि में हम भारत में अंग्रेज़ी शिक्षा के विकास पर विचार करेंगे। परंतु अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रारंभ से पहले हम उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में शिक्षा की देशी पद्धति पर विचार करें।

1.3 देशी शिक्षा

हमने जो सूचना पुराने ब्रिटिश दस्तावेजों से एकत्र की है, वह अठारहवीं शताब्दी के अंत और उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में भारत में शिक्षा की देशी पद्धति के बारे में बहुत प्रारंभिक अनुमान देती है। यहाँ मुसलमानों के लिए "मदरसा", "मकतब" तथा "टोल्स" हिन्दुओं के लिए "पाठशाला" थे। उनकी अरबी और संस्कृत में उच्च अध्ययन केन्द्रों से फारसी और देशी भाषाओं में विद्यालयी व्यक्तियों के लिए निचले स्तरों तक की श्रेणियाँ थी। उन दिनों उच्च अध्ययन के केन्द्रों में वैज्ञानिक और धर्म निरपेक्ष शिक्षा का अभाव मुख्य सीमाएँ थी। परंतु बहुत से हिन्दू फारसी विद्यालयों में पढ़ते थे क्योंकि उस समय फारसी न्यायालय की भाषा थी और फारसी विद्यालयों में हिन्दू शिक्षक भी थे। चाहे यह "टोल" हो या "मदरसा", इनमें शिक्षा की देशी पद्धति की कुछ उभयनिष्ठ विशेषताएँ थीं:

- साधारणतया विद्यालय जमींदारों से या स्थानीय धनी व्यक्तियों से प्राप्त चंदे की सहायता से चलते थे।
- पाठ्यक्रम में परंपरागत भाषाओं जैसे संस्कृत, अरबी या फारसी और परंपरागत हिन्दू या इस्लामी परंपरा के विषय जैसे, व्याकरण, तर्क, कानून, दर्शन औषधि आदि पर मुख्य बल दिया जाता था।
- यद्यपि, उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ के उपलब्ध दस्तावेजों से हम पाते हैं कि संस्कृत अध्ययन केवल ब्राह्मणों का अधिकार था परंतु निम्नतर स्तर के विद्यालयों में ग़ैर ऊँची जातियों और अनुसूचित जातियों का प्रतिनिधित्व था।
- साधारणतया महिलाओं को औपचारिक शिक्षा पद्धति से वर्जित किया जाता था।
- छापाखानों के अभाव में उन्नीसवीं शताब्दी तक मौखिक परंपरा या अध्यापक की स्मृति ही ज्ञान और सूचना का आधार होता था, इसे हस्तलिखित पांडुलिपि से सम्पूरित किया जाता था।

- राज्य की विद्यालयी शिक्षा में थोड़ी या बिल्कुल नहीं के बराबर भूमिका होती थी। यद्यपि राज्य लोगों को उनकी विद्वता की प्रसिद्धि पर उन्हें संरक्षण देते थे।

उच्च अध्ययन केन्द्रों के अतिरिक्त, जो मूलतः ऊँची जातियों से जुड़े क्षेत्र में थे, वहाँ बहुत बड़ी संख्या में प्रारंभिक विद्यालय थे। भारत में अधिकांश गाँवों में इस प्रकार के प्रारंभिक विद्यालय थे। ये गाँव के जमींदार या स्थानीय विशिष्ट वर्गों की सहायता से व्यक्तिगत अध्यापकों द्वारा चलाए जाते थे। ये विद्यालय विद्यार्थियों को दिन–प्रतिदिन की आवश्यकताओं को पूरी करने के लिए प्रारंभिक गणित और आधारभूत साक्षरता के बारे में पढ़ाते थे। बहुत पिछड़ी व सुविधावंचित जातियों को छोड़कर समाज के भिन्न–भिन्न वर्गों से विद्यार्थी इन विद्यालयों में पढ़ते थे।

जब अंग्रेज भारत में आए, उस समय अरबी मदरसों का बहुत ज्यादा एकीकृत अस्तित्व था परंतु शिक्षा या विधियों के अभिविन्यास अधिक खोज आधारित न होकर धार्मिक अधिक है। सामाजिक निष्कर्ष के अनुसार यद्यपि सिद्धान्ततः संस्कृत विद्वान ब्राह्मण पुरुष थे, परंतु अरबी विद्वान संभवतः अपने सामाजिक मूल या अवस्थिति में थोड़ा कम विशेष थे। संस्कृत और अरबी दोनों भाषाओं में साहित्य दर्शन और मीमाशां के स्थान पर उच्च अध्ययन में धर्मनिरपेक्षता और कानून, औषधि, गणित, खगोल विज्ञान आदि के वैज्ञानिक अध्ययन पुस्तकों तथा चर्चा की सहायता से आगे बढ़ाया लेकिन स्मरण आधारित ज्ञान पर ज्यादा जोर दिया गया। कल्पना, स्वच्छंद चिंतन या गहन प्रेक्षण पर आधारित ज्ञान के सृजन की उस सामंती राजसी समाज में इतनी अधिक माँग नहीं थीं जबकि लंबे पाठ्यांशों को केवल स्मृति के द्वारा प्रतिलिपि तैयार करने की क्षमता पर जोर था।

यह परंपरा आगे नहीं बढ़ी, इस प्रकार इसका ह्रास संभवतः निम्नलिखित कारणों से हुआः

- भारतीय जाति प्रथा ने ब्राह्मणों के ज्ञान से "अन्य" जाति के हस्तकौशलों और व्यावहारिक कलाओं का पृथक्करण किया या संभवत;
- भारतीय औद्योगिक क्रांति और राष्ट्रीय राज्य की ऊपर उठने की सम्बन्धित विफलता, जिसके लिए समय और प्रौद्योगिकी अभी तैयार नहीं थी, या
- परंपरागत हिन्दू शास्त्रों द्वारा निर्धारित सिद्धांतवादी, अधिकारवादी बौद्धिक प्रवृत्तियाँ परंपरा के ह्रास के मुख्य कारण थे। अधिकांश विद्वान स्थानीय शासकों के प्रोत्साहन से कुछ ही शहरों जैसे वाराणसी, पूणे, तंजौर, मदुराई, नाडिया आदि में संकेन्द्रित थे।

इसलिए जो शिक्षा प्रणाली उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में भारत में विद्यमान थी, उसके अपने गुण और दोष थे। प्रारंभिक विद्यालयों ने ग्रामीण लोगों को बुनियादी शिक्षा प्रदान की और इसके पाठ्यक्रम का धर्म निरपेक्ष दृष्टिकोण था और व्यावहारिक आवश्यकताओं के प्रति अनुक्रियाशील था। संभवतः उच्च अध्ययन के केन्द्रों (टोल और मदरसों) में व्याकरण, दर्शन और धर्म की बारीकियों पर अधिक बल देने से धर्म निरपेक्ष और वैज्ञानिक ज्ञान के विस्तार की संभावना संकीर्ण हुई। उपनिवेशी शासकों ने देशी प्रणाली का बहिष्कार किया और उसके स्थान पर उन्होंने अपनी ही शिक्षा प्रणाली लागु की। देशी प्रणाली की सामर्थ्य जो जनसामान्य की शिक्षा के माध्यम के रूप में थी, नष्ट कर दी गई। निम्नलिखित भागों में, हम देखेंगे कि भिन्न–भिन्न समूहों में विवाद कैसे आरंभ हुए कि भारत में शिक्षा के विकास में ईस्ट इंडिया कम्पनी की क्या भूमिका होनी चाहिए।

क्रियाकलाप 1.1

क्या आप सोचते हैं कि स्वतंत्रता के बाद वर्तमान शिक्षा पद्धति पूर्णतः देशी है। यदि हाँ, तो हमारी वर्तमान शिक्षा प्रणाली के किन घटकों को आप देशी अनुभव करते हैं? कुछ उदाहरण दीजिए। यदि आपका उत्तर "नहीं" है, तो उसका औचित्य बताइए।

....

....

....

....

....

....

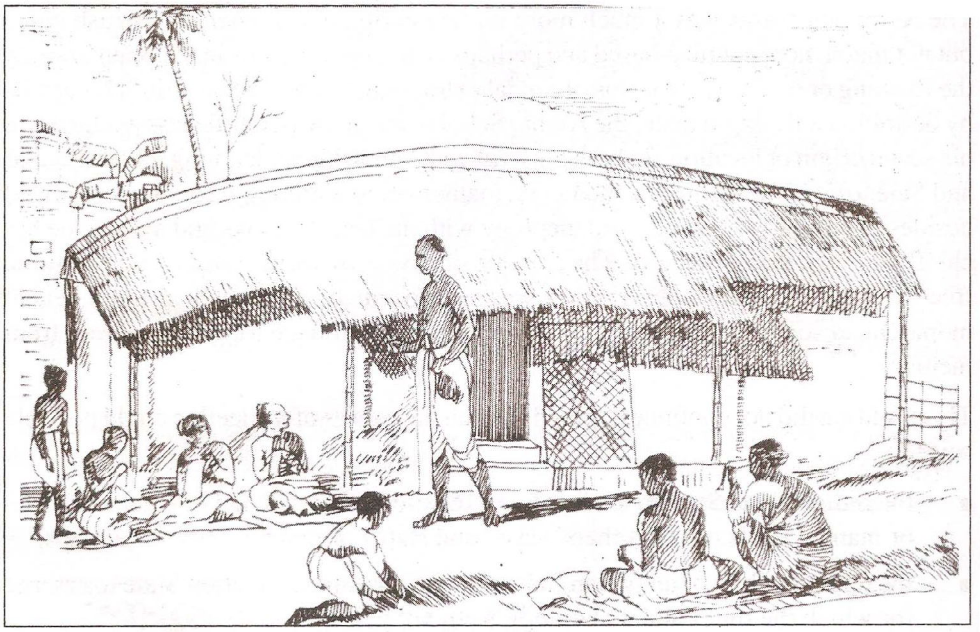

पाठशाला

1.4 शिक्षा नीति पर वादविवाद

अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक ईस्ट इंडिया कम्पनी ने भारत में शिक्षा के उन्नयन में अपनी भूमिका के बारे में किसी दुविधा का सामना नहीं किया। यह मूलतः वाणिज्यिक कम्पनी थी, इसलिए इसका आधारभूत उद्देश्य व्यापार और लाभ था। राज्य क्षेत्र बढ़ाने से पहले कम्पनी की शिक्षा में कोई भूमिका नहीं थी, यद्यपि मिशिनरियों द्वारा धर्मार्थ विद्यालय स्थापित करने तथा शिक्षा का संवर्धन करने के प्रयास किए गए थे। परंतु अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में ईस्ट इंडिया कम्पनी के अंग्रेजों के नियंत्रण से परिवर्तन प्रारंभ हुआ। कार्यालयी क्षेत्र में तथा उसके बाहर भी इस बारे में वाद–विवाद बढ़ रहा था कि भारत में शिक्षा के उन्नयन में ईस्ट इंडिया कम्पनी की क्या भूमिका होनी चाहिए?

भारत में राजनीतिक शक्ति के अर्जन के तत्काल बाद ईस्ट इंडिया कम्पनी के अधिकारी देशी समाज के धर्म और संस्कृति के क्षेत्र में तटस्थता या अहस्तक्षेप बनाए रखना चाहते थे। इसके पीछे कारण सम्भवतः प्रतिकूल प्रतिक्रिया का भय और स्थानीय लोगों द्वारा उनकी भूमिका का विरोध था। परंतु भिन्न–भिन्न क्षेत्रों से लगातार दबाव, मिशनरियों, उदारवादियों, प्राच्यवादियों और लाभार्थियों ने ईस्ट इंडिया कम्पनी को अपनी तटस्थता छोड़ने के लिए और शिक्षा के उन्नयन का उत्तरदायित्व ग्रहण करने के लिए बाध्य किया।

इसका दूसरा महत्वपूर्ण बिन्दु यह था कि क्या ईस्ट इंडिया कम्पनी को पश्चिमी शिक्षा प्रोत्साहित करनी चाहिए या पूर्वी देशों की शिक्षा को? इस पर दो प्रकार के मत प्राप्त हो रहे थे। प्रारंभिक अवस्था में ईस्ट इंडिया कम्पनी के अधिकारियों ने पूर्वी देशों की शिक्षा को संरक्षण दिया। इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता है कि कुछ अंग्रेज़ों में पूर्वी देशों की शिक्षा अर्जित करने और उसका उन्नयन करने की वास्तविक इच्छा थी।

इस संदर्भ में हम वारेन हेस्टिंग (1781) द्वारा "कलकत्ता मदरसा", जानथन डुन्कन (1791) द्वारा "बनारस संस्कृत कालेज" और विलियम जॉन (1784) द्वारा "एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल" की स्थापना का उल्लेख कर सकते हैं। जो विद्यमान संस्थाओं में पूर्वी शिक्षा जारी रखने और भारतीय परंपरागत परंपरा का संवर्धन करने के पक्ष में थे, वे **"प्राच्यवादी"** कहलाते हैं। प्राच्यवादियों द्वारा प्रस्तुत तर्क था कि साधारणतया भारतीयों में यूरोपीय ज्ञान और विज्ञान के विरुद्ध पूर्वाग्रह हैं, इसलिए पश्चिमी ज्ञान पूर्णतः अस्वीकृत हो सकता है। उनमें से कुछ इस प्राचीन सभ्यता की परंपरागत परंपरा और संस्कृति की खोज करने के इच्छुक भी थे। लेकिन यदि हम प्राच्य संस्कृति के संवर्धन के लिए कुछ अंग्रेज़ों की वास्तविक इच्छा को स्वीकार करते हैं, तो इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्राच्यवादी कुछ व्यावहारिक विचारों से जुड़े थे। वे ब्रिटिश अधिकारियों को स्थानीय भाषा और संस्कृति सिखाना चाहते थे ताकि वे अपने कार्य में बेहतर हो सकें।

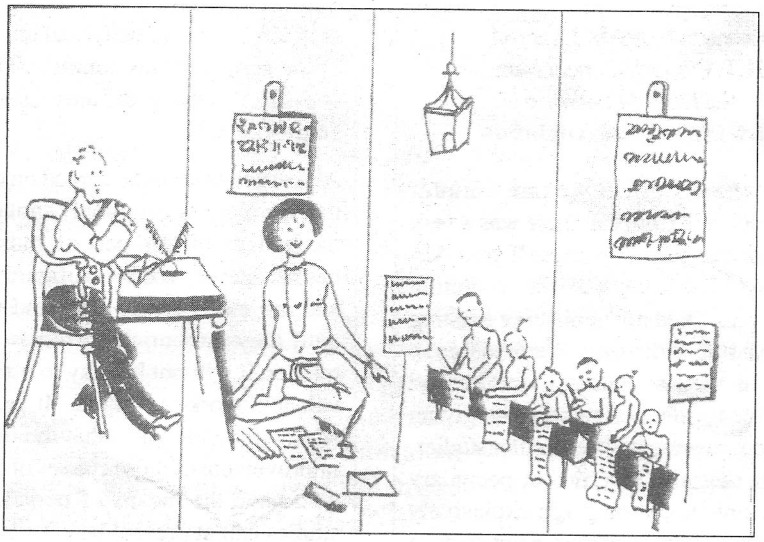

कार्टूनः प्राच्य शिक्षा का पश्चिमी दृष्टिकोण

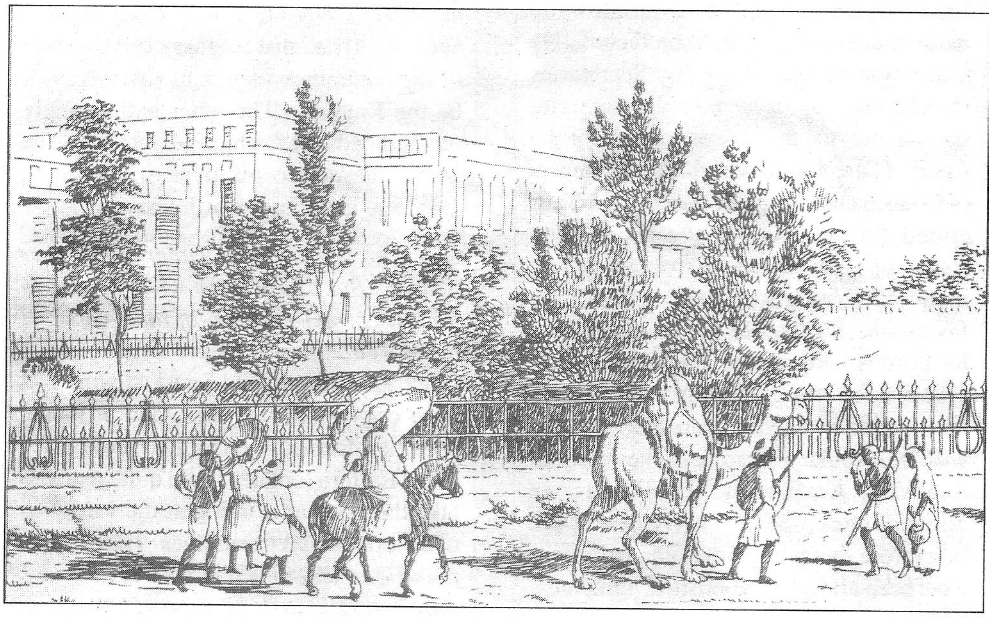

कलकत्ता मदरसा

यह कलकत्ता में 1800 में पोर्ट विलियम महाविद्यालय की नींव के पीछे मुख्य उद्देश्य था। दूसरा उद्देश्य देशी समाज के गणमान्य वर्ग से मैत्रीपूर्ण संबंध विकसित करना और उसकी संस्कृति समझना था। ''कलकत्ता मदरसा'' और '' बनारस संस्कृत कालेज'' की स्थापना के पीछे भी यह मुख्य कारण था।

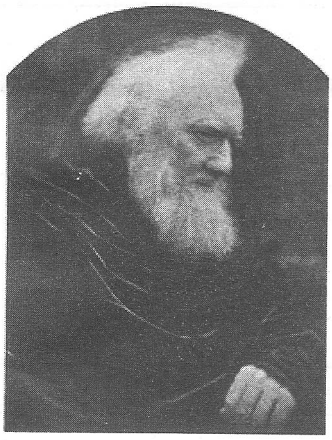

एच.टी. प्रिन्सेप

थॉमस मैकाले

प्राच्यवादियों और आंग्लवादियों के बीच विवाद पर एच.टी. प्रिंसेप की डायरी से उद्धरण

जब यह विषय परिषद के सम्मुख विचार के लिए आया तो मेरे और मैकाले के बीच बहुत गर्म तर्क हुए। मुद्दा वह प्रस्ताव था जिसमें विद्यमान कालेजों को समाप्त नहीं करने के बारे में कहा गया था, बल्कि उन्हें अंग्रेज़ी को तथा स्थानीय भाषा के साहित्य को भी अंग्रेज़ी अनिवार्य बनाते हुए पढ़ाना था; देशी भाषा अध्ययन को कुछ कम प्रोत्साहन देना था, यह घोषणा थी कि भविष्य में सभी सरकारी वित्तीय सहायतायें केवल अंग्रेज़ी भाषा माध्यम से यूरोपीय विज्ञान में अध्ययन को प्रोत्साहित करने के लिए दीं जाऐंगी। लार्ड डब्ल्यू बैन्टिक ने मेरे ज्ञापन को रिकार्ड में रखने से भी अस्वीकार कर दिया। उसने कहा, यह बिल्कुल दुर्व्यवहार है कि सचिवो स्वयं ज्ञापन लिखने लगें। यह देखना न्यायालय के निदेशकों के लिए पर्याप्त था कि परिषद के सदस्य रिकार्ड को रखने के लिए क्या स्थान चुनते हैं? इस प्रकार मामला कुछ समय के लिए समाप्त किया गया। इस अवसर पर पारित प्रस्ताव बाद में संशोधित किया गया और इसे लार्ड आकलैण्ड द्वारा पुरानी देशी संस्थाओं के लिए थोड़ा उत्साहवर्धक बनाया गया। परंतु देशी साहित्य के संबंध में सरकार द्वारा पहले की भाँति अंग्रेज़ी का अध्ययन प्रोत्साहित किया गया। परिणामस्वरूप, संस्कृत, अरबी और फारसी का अध्ययन अब से पहले कम किया गया परंतु किसी भी पुरानी संस्था को बिल्कुल बंद नहीं किया गया (बल दिया गया)।

टी.बी. मैकाले के 2 फरवरी 1835 के कार्यवृत्त से उद्धरण

अब हम मामले के सार में आते हैं। हमारे पास सरकार द्वारा प्रयोग किए जाने वाली निधि है जिसे सरकार इस देश के लोगों की बौद्धिक उन्नति के लिए प्रयोग करेगी। साधारण प्रश्न है कि इसका प्रयोग करने का सबसे अधिक उपयोगी तरीका क्या है?

सभी दल एक बिन्दु पर सहमत प्रतीत होते हैं कि भारत के इस भाग के मूल निवासियों में सामान्यतया बोली जाने वाली बोलियों में न तो साहित्य की और न ही विज्ञान की जानकारी होती है और इसके अलावा, यह इतनी घटिया और अपरिष्कृत होती है कि जब तक उन्हें अन्य किसी तरीके से समृद्ध नहीं किया जाता है तब तक उनमें कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं किया जा सकता है।

ऐसा प्रतीत हुआ कि यह सभी पक्षों ने स्वीकार किया कि लोगों के उन वर्गों के बौद्धिक विकास के लिए, जिसके पास उच्च्च शिक्षा प्राप्त करने के साधन हैं, देशी भाषा से भिन्न कुछ भाषाओं के कारण प्रभावित हो सकते हैं।

तब वह भाषा क्या होगी? समिति के आधे सदस्य मानते हैं कि यह अंग्रेज़ी होनी चाहिए। अन्य आधे सदस्य अरबी और संस्कृत की सिफारिश करते हैं। मुझे प्रतीत होता है कि पूरा प्रश्न यह होना चाहिए कौन–सी भाषा सीखना सबसे अच्छा है?

मुझे न तो संस्कृत का और न ही अरबी का कोई ज्ञान है। परंतु मैने वहीं किया है जो मैं उसके मूल्यों को जानने के लिए कर सकता हूँ। मैंने प्रसिद्ध अरबी ओर संस्कृत कार्यों का अनुवाद पढ़ा है। मैने यहाँ और घर दोनों जगह उन लोगों से बातचीत है जो पूर्वी भाषाओं में पारंगत है। मैं प्राच्यवादियों के अनुसार अपने प्राच्य शिक्षा के मूल्यांकन को स्वीकारने के लिए बिल्कुल तैयार हूँ। मैंने उनमें से, कोई भी एक ऐसा नहीं पाया है जो यह अस्वीकार करें कि अच्छी यूरोपीय पुस्तकालय का कोई भी एक अलमारी भारत और अरब के संपूर्ण देशी साहित्य के साथ बराबर महत्व रखती था। पश्चिमी साहित्य की जटिल श्रेष्ठता वास्तव में समिति के उन सदस्यों द्वारा स्वीकार की गई है जो शिक्षा का प्राच्य योजना का समर्थन करते हैं।

क्रियाकलाप 1.2

भारतीय शिक्षा के विकास में उनकी भूमिका के महत्व पर प्रकाश डालते हुए एच.टी. प्रिन्सेप और थॉमस मैकाले में से प्रत्येक पर 250 शब्दों में छोटी–सी रिपोर्ट तैयार कीजिए।

....

....

....

....

....

इंग्लैंड में भिन्न–भिन्न समूहों – इवेन्जिलकल लेखकों, उदारवादियों और उपयोगितावादियों द्वारा इस प्राच्यवादी दृष्टिकोण का घोर विरोध किया गया। नई सांस्कृतिक प्रकृति, जो इंग्लैंड में औद्योगिक क्रान्ति के साथ विकसित हुई, कंपनी के एकाधिकार व्यापार के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण थी। औद्योगिक क्रांति के बाद आधुनिक पश्चिमी संस्कृति से परे कुछ मूल्य देखे गये। इवेन्जिलकल की ईसाई विचारों और पश्चिमी संस्थाओं की श्रेष्ठता के प्रति दृढ़ धारणा थी। इवेन्जिलकल धारणा के दो बड़े प्रतिपादक चार्ल्स ग्राण्ट और विलियम विल्वेरफोर्स थे।

अन्य जो इवेन्जिलकल धारणा पर विश्वास नहीं करते, वे भी पश्चिमी ज्ञान की श्रेष्ठता पर विश्वास करते थे और इस विचार के प्रमुख समर्थकों में एक थॉमस बेबिंगटन मैकाले थे। इसने सिफारिश की कि भारत में अंग्रेज़ी भाषा के माध्यम से पश्चिमी शिक्षा को बढ़ावा दिया जाना चाहिए और यही भारत में शिक्षा नीति का उद्देश्य होना चाहिए। जेम्स मिल, भारत में उपयोगितावाद का प्रमुख समर्थक, भारतीय धर्म और संस्कृति का बहुत बड़ा आलोचक था, परंतु उसका विश्वास था कि भारत में वांछित रूपांतरण लाने के लिए अकेले शिक्षा ही पर्याप्त नहीं है। विधि संबंधी और प्रशासनिक सुधार भी इस प्रयोजन के लिए आवश्यकता हैं।

संक्षेप में, इन सभी समूहों जिन्हें **"आंग्लवादी"** कहा जा सकता है, सामान्यतः उनका विश्वास था कि भारतीय पिछड़ी अवस्था में है और केवल अंग्रेज़ी माध्यम से दी गई पश्चिमी शिक्षा ही एक मात्र उपाय है। परंतु शिक्षा बहुत खर्चीली है। इसलिए लोगों के ऐसे समूह को शिक्षित करना बेहतर था जो धीरे–धीरे समाज के शेष लोगों को शिक्षित करेंगे। शिक्षा

अभिजात वर्ग से नीचे जनसाधारण से आएगी। इस तरीके से नए सांस्कृतिक मूल्य और ज्ञान भारत में विकसित करने में सहायक होंगे। बाद में इसे **निस्यंदन (फिल्टरेशन) सिद्धांत** कहा गया।

मिशिनरियों का भारत में अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रवर्तन का समर्थन करने का पूरी तरह से भिन्न तर्क था। मिशनरियों का उद्देश्य शिक्षा के माध्यम से देशी समाज को सुलभता प्रदान करना था और नए सांस्कृतिक मूल्यों का प्रचार करना था जो ईसाई धर्म में लोगों का धर्मांतरण करने में सहायक होगा।

शिक्षा नीति पर इस वाद–विवाद के लिए भारतीयों की प्रतिक्रिया मिली जुली थी। राजा राम मोहन राय और अन्य ने इस विश्वास के साथ पश्चिमी शिक्षा के प्रवर्तन का समर्थन किया कि यह पश्चिमी विज्ञान का ज्ञान, तर्कवाद, नए विचारों और साहित्य का आत्मसात करने में भारतीयों की सहायता करेगा। यह देश के पुनरूद्धार में सहायक होगा। कुछ अन्य लोगों का विश्वास था कि पश्चिमी शिक्षा का ज्ञान, विशेषतः अंग्रेज़ी का ज्ञान उन्हें नौकरी पाने में और शासक वर्ग के समीप आने में सहायक होगा। इसलिए उन्होंने पश्चिमी शिक्षा का समर्थन किया। इसके विरोध में बहुत रुढ़िवादी थे जो भारतीय परंपरागत भाषाओं और संस्कृति के कट्टर समर्थक थे। उन्हें आशंका थी कि पश्चिमी शिक्षा के प्रवर्तन से देशी समाज और संस्कृति नष्ट हो जाएगी।

इसलिए यूरोपियों में और भारतीयों में भी भारत में शिक्षा के विकास में कम्पनी की भूमिका के बारे में भिन्न–भिन्न प्रकार की राय थी। आइए, अगले भाग सन् 1757–1857 के दौरान भारतीय शिक्षा में हुए परिवर्तनों को देखें।

बोध प्रश्न 1.1

टिप्पणीः (क) अपने उत्तरों को दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

(ख) अपने उत्तरों को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

1) शिक्षा की देशी पद्धति का मूल्यांकन कीजिए जो ब्रिटिश के आगमन के समय विद्यमान थी। इसके अंत के क्या कारण थे?

....

....

....

....

2) "प्राच्यवादियों" और "आंग्लवादियों" शिक्षा के संबंध में दृष्टिकोण किस प्रकार भिन्न थे?

....

....

....

....

3) नीचे वाक्यों को पढ़िए और सही (√) या गलत (×) का निशान लगाइएः

i) शिक्षा की भारतीय पद्धति में जनसाधारण की उपेक्षा की जाती थी।

ii) सामान्यतः देशी प्रणाली में महिलाओं को शिक्षा से वंचित किया जाता था।

iii) प्रारंभ में ईस्ट इंडिया कम्पनी के अधिकारियों ने देशी शिक्षा में कोई हस्तक्षेप नहीं किया।

iv) आंग्लवादी पश्चिमी शिक्षा को बढ़ावा देना चाहते थे क्योंकि वे भारत को आधुनिक बनाना चाहते थे।

1.5 अंग्रेज़ी शिक्षा का विकास

जैसा कि हमने पिछले भाग में देखा कि अंग्रेज़ी शिक्षा केवल उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ से शुरु हुई है। उससे पहले मिशिनरियों द्वारा या व्यक्तिय विशेष द्वारा प्रयास किए गए जो बहुत सीमित थे। इस संबंध में तंजौर, रामनाड और शिवगंगा में स्ववार्टज विद्यालयों, सिरामपुर में बापटिस्ट मिशिनरियों, लंदन मिशन सोसाइटी, बम्बई में अमेरिकन मिथोडिस्टों का उल्लेख कर सकते हैं। ये आधुनिक शिक्षा के क्षेत्र में मुख्य प्रवर्तक माने गये थे। इन मिशिनरी क्रियाकलापों और कुछ अंग्रेज़ों जैसे चार्ल्स ग्राण्ट, और विलियम विल्बेरफोर्स ने ईस्ट इंडिया कम्पनी को शिक्षा में अपनी अहस्तक्षेप की अपनी नीति त्यागने के लिए विवश किया। पहली बार ब्रिटिश संसद ने कम्पनी के चार्टर में एक खंड शामिल किया कि गवर्नर–जनरल–इन–काउंसिल को शिक्षा के लिए प्रति वर्ष कम से कम एक लाख रुपये की राशि रखनी आवश्यक होगी। परंतु कम्पनी ने इस निधि का उपयोग मुख्यतया भारतीय भाषाओं और साहित्य के संवर्धन और प्रोत्साहन पर किया।

विलियम केरी बापस्टि मिशिनरी

सन् 1813 के चार्टर एक्ट का महत्व था कि कम्पनी ने पहली बार भारत में शिक्षा के उन्नयन के लिए राज्य का उत्तरदायित्व स्वीकार किया।

सन् 1823 में भारत में शिक्षा के विकास की देखभाल करने के लिए जनरल कमेटी ऑन पब्लिक इंस्टीट्यूशन की स्थापना की गई थी। इस समिति के अधिकांश सदस्य प्राच्यवादी समूह के थे और उन्होंने पश्चिमी शिक्षा को बढ़ावा देने के बदले प्राच्य शिक्षा के संवर्धन का दृढ़ता से समर्थन किया। परंतु जैसा कि हमने पिछले भाग में चर्चा की है, इंग्लैंड और भारत दोनों में भिन्न–भिन्न वर्गों ने पश्चिमी शिक्षा को प्रोत्साहन देने के लिए कम्पनी पर दबाव बढ़ाया। मैकाले, पश्चिमी शिक्षा का अध्यक्ष और लॉर्ड बैंटिक, गवर्नर जनरल ने आंग्लवादियों का पक्ष लिया और बैंटिक ने अपना निर्णय दिया कि "भारत में ब्रिटिश सरकार का बड़ा उद्देश्य अब से भारत के मूल निवासियों में यूरोपीय साहित्य और विज्ञान को बढ़ाना देना था और शिक्षा के लिए स्वीकृत समस्त निधि केवल अंग्रेज़ी शिक्षा पर ही व्यय की जाएगी।''

सन् 1835 में बैंटिक ने जिस प्रस्ताव की घोषणा कि उसके कुछ महत्वपूर्ण बिन्दु निम्न प्रकार थे:

- न्यायालय भाषा के रूप में फारसी हटा दी गई थी और उसके स्थान पर अंग्रेज़ी रखी गई।
- अंग्रेज़ी पुस्तकों का मुद्रण और प्रकाशन निःशुल्क किया गया और वे अपेक्षाकृत कम कीमत पर उपलब्ध थी।
- अंग्रेज़ी शिक्षा को प्रोत्साहन देने के लिए अधिक निधि दी गई, जबकि प्राच्य शिक्षा के संवर्धन के लिए निधि में कटौती की गई।

ऑकलैण्ड, जो बैंटिक के बाद गवर्नर–जनरल आया, शिक्षा में अंग्रेज़ी के प्रोत्साहन की आवश्यकता पर विश्वास करता था। उसने ढाका, पटना, बनारस, इलाहाबाद, आगरा, दिल्ली और बरेली में अधिक अंग्रेज़ी कॉलेज खोलने की सिफारिश की। सन् 1841 में गवर्नर जनरल जनरल कमेटी ऑन पब्लिक इंस्टीट्यूशन समाप्त की गई और उसका स्थान काउंसिल ऑफ एजुकेशन ने ले लिया। इस अवधि में अंग्रेज़ी शिक्षा के विकास में अगला प्रमुख ऐतिहासिक घटना सन् 1854 का वुड का डिस्पैच था। सर चार्ल्स वुड, अध्यक्ष, बोर्ड ऑफ काउंसिल ने सन् 1854 में नीति निर्धारित की जो भारत सरकार के शिक्षा कार्यक्रम का **मार्गदर्शी सिद्धांत** बना। डिस्पैच में सुस्पष्ट रूप से घोषणा की गई कि "जिस शिक्षा को हम भारत में प्रसारित करना चाहते हैं उसका उद्देश्य यूरोप की उन्नत कला, विज्ञान, दर्शन और साहित्य का विस्तार करना है।" संक्षेप में कह सकते हैं यूरोपीय ज्ञान का विस्तार।

डिस्पैच की मुख्य सिफारिशें निम्न प्रकार थीः

- कम्पनी के राज्य क्षेत्र के पाँच प्रांतों में से प्रत्येक में शिक्षा विभाग का गठन
- कलकत्ता, बम्बई और मद्रास में विश्वविद्यालय की स्थापना
- श्रेणीबद्ध विद्यालयों – उच्च माध्यमिक विद्यालयों, माध्यमिक विद्यालयों और प्रारंभिक विद्यालयों के बीच सजाल (Network) की स्थापना
- शिक्षण प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना
- देशी भाषा के विद्यालयों को प्रोत्साहन
- एक ऐसी प्रणाली की स्थापना जो विद्यालयों की आर्थिक मदद के लिए अनुदान दे।

सन् 1857 में कलकत्ता, बम्बई और मद्रास में तीन विश्वविद्यालय स्थापित किए गए थे। विश्वविद्यालयों और प्रांतों में शिक्षा विभागों की स्थापना ने भारत में आधुनिक शिक्षा को बुनियादी ढाँचा प्रदान किया, वास्तव में वुड के डिस्पैच ने शिक्षा में शिक्षा में आगे विकास के लिए प्रतिमान प्रदान किया।

इस सरकारी पहल के साथ–साथ पश्चिमी शिक्षा के प्रोत्साहन के लिए मिशनरियों और कुछ व्यक्तियों द्वारा भी पहल की गई थी। बंगाल में क्रिश्चियन मिशनरियों द्वारा कुछ महत्वपूर्ण कालेज स्थापित किए गए थे। इन क्रिश्चियन मिशनरी संस्थाओं ने पश्चिमी ज्ञान का विस्तार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई यद्यपि उनका बुनियादी उद्देश्य ईसाई धर्म के प्रति लोगों को आकर्षित करना था। मिशनरियों के अलावा कुछ लोगों ने भी कलकत्ता में अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रोत्साहन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। डेविड हरे द्वारा और कुछ स्थानीय प्रतिष्ठित व्यक्तियों द्वारा कलकत्ता में हिन्दू कालेज (बाद में इसका नाम प्रेजिडेन्सी कॉलेज) की स्थापना ने भारतीयों में धर्म निरपेक्ष शिक्षा के उन्नयन को सुगम बनाया।

डेविड हरे धार्मिक विचारों और संस्कृत तथा अरबी भाषाओं के शिक्षण के विरुद्ध था। जे. ई. डी. बेथून ने, जो महिला शिक्षा के प्रबल समर्थक थे, कलकत्ता में बालिका विद्यालय की स्थापना की। बंगाल में विद्या सागर ने महिलाओं की शिक्षा का समर्थन किया। इन सभी संस्थाओं को उन स्थानीय लोगों से सकारात्मक प्रतिक्रिया मिली जिन्होंने शिक्षा के अवसरों का आगे विस्तार करने के लिए ब्रिटिश शासन से निवेदन किया था।

क्रियाकलाप 1.3

अपने इलाके के पाँच सरकारी और पाँच निजी विद्यालयों में जाए। प्रारंभिक कक्षा के छात्रों और उनके अध्यापकों से अंग्रेज़ी भाषा के उनके समझ के बारे में विचार विमर्श करें। क्या उन्हें किसी कठिनाई का सामना करना पड़ता है? उनकी कठिनाइयों के बारे में चर्चा करें।

....

....

....

....

....

इसी प्रकार, बम्बई और मद्रास में भी मिशनरी विद्यालय स्थापित किए गए थे। बम्बई में उल्लेखनीय प्रगति नेटिव एजुकेशन सोसाइटी और एल्फिनस्टोन इंस्टीट्यूशन ने की थी। जिन्होंने कलकत्ता के हिन्दू कॉलेज के समान भूमिका निभाई। मद्रास में 1837 में क्रिश्चियन कॉलेज और सन् 1853 में प्रेजिडेन्सी कॉलेज स्थापित किए गए। उत्तर प्रदेश में पहला अंग्रेज़ी माध्यम कॉलेज आगरा में सन् 1823 में स्थापित किया गया। इस प्रकार सन् 1850 के दशक तक हम देखते हैं कि भारत में अधिकांश प्रांतों में आधुनिक शिक्षा की नींव अंग्रेजों द्वारा ही स्थापित की गई थी।

1.6 एक मूल्यांकन

उपर्युक्त चर्चा से ज्ञात होता है कि अंग्रेज़ी शिक्षा धीरे–धीरे कैसे बढ़ी। सरकार ने उन्नीसवीं शताब्दी में शिक्षा की देशी पद्धति की उपेक्षा करते हुए इस प्रणाली को प्रोत्साहित किया। भारत में अंग्रेज़ी शिक्षा का विस्तार एक लम्बी प्रक्रिया थी और सन् 1857 से पहले इसका विस्तार सीमित था। फिर भी सन् 1857 तक शिक्षा में जो भी परिवर्तन आए, उनकी समीक्षा गहराई से करना आवश्यक है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि नई शिक्षा ने ज्ञान के क्षितिज को अधिक व्यापक बनाया है। विशेषकर मुद्रणालयों की स्थापना और पुस्तकों की आसान उपलब्धता ने परम्परागत बाधाओं को दूर किया और देशी समाज की युवा पीढ़ी को प्रभावित किया तथा वे विद्यमान परंपरागत मूल्यों पर प्रश्न करने लगे। तर्कवाद की एक नई भावना विकसित हुई।

यद्यपि इन सकारात्मक योगदानों को उस शिक्षा प्रणाली की सीमाओं के साथ संतुलित किया जाना आवश्यक है जो उपनिवेशी प्रायोजकता के अधीन विकसित हुई। अंग्रेज़ी शिक्षा ने सामूहिक शिक्षा की पूर्णतः उपेक्षा की। देशी पद्धति में प्रारंभिक विद्यालय समाज के बहुत बड़े वर्ग को बुनियादी शिक्षा देते हैं। परंतु नई शिक्षा में कुछ चुनिन्दा व्यक्तियों को ही शिक्षा देने पर बल दिया गया। अभिजात्य वर्ग से शिक्षा नीचे जनसाधारण तक आने की आंग्लवादी विचारधारा ने व्यवहार रूप में कार्य नहीं किया। इस प्रणाली ने सभी को शिक्षा की सुलभता नहीं दी और इससे सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों तथा समुदायों का पिछड़ापन स्थायी बन गया। समाज में विद्यमान विभाजन अधिक चौड़ा हो गया।

दूसरा, पश्चिमी विज्ञान और प्रौद्योगिकी के समर्थन के बावजूद भी विद्यालयों और महाविद्यालयों के पाठ्यक्रम में पश्चिमी साहित्य, दर्शन और मानविकी विषयों पर जोर दिया जा रहा था। प्रौद्योगिकी और प्राकृतिक विज्ञान की अनदेखी की गई जिससे बिना इस ज्ञान के देश की बौद्धिक प्रगति के साथ साथ आर्थिक विकास में बाधा आई।

इस नई शिक्षा का एक अन्य पहलू शिक्षा का राजनीतिक सत्ता की अधीनस्थता था। चाहे यह प्राच्यवादी हो या आंग्लवादी, उनकी शिक्षा नीति का बुनियादी उद्देश्य उपनिवेशी शासन को सुदृढ़ करना था। प्राच्यवादी इसे भारतीयकरण के माध्यम से करना चाहते थे और आंग्लवादी पश्चिमीकरण के माध्यम से इसे करना चाहते थे। शिक्षा नीति का मूलभूत प्रयोजन उपनिवेशी सरकार के राजनीतिक हितों से अलग नहीं था।

इस प्रकार हमने देखा कि शिक्षा विभिन्न विचारधाराओं में वाद–विवाद का विषय हो गया। शिक्षा नीति उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में विचारों के टकराव का परिणाम था। कुल मिलाकर उपनिवेशी प्रशासन ऐसी शिक्षा नीति को प्रोत्साहित करना चाहता था जो उसके अपने हितों को पूरा करे।

बोध प्रश्न 1.2

टिप्पणीः (क) अपने उत्तरों को दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

(ख) अपने उत्तरों को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

1) सन् 1837 से सन् 1857 के बीच की अंग्रेजी शिक्षा नीति की चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

2) चर्चा कीजिए, भारत में अंग्रेजी शिक्षा ने राजनीतिक प्रयोजन कैसे पूरे किए? 100 शब्दों में अपना उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

1.7 सारांश

इस इकाई में हमने देखा है कि अंग्रेजों द्वारा शिक्षा की नई प्रणाली से देशी प्रणाली धीरे–धीरे किस प्रकार प्रतिस्थापित की गई। बहुत–से ऐसे अंग्रेज़ थे जो प्राच्य शिक्षा को प्रोत्साहित करना चाहते थे परंतु प्राच्यवादियों पर आंग्लवादी हावी रहे। शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए नए विद्यालय और महाविद्यालय स्थापित किए गए। अंग्रेज़ी शिक्षा के माध्यम से नए सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक विचार आए परंतु शिक्षा नीति ने वैज्ञानिक और तकनीकी शिक्षा की उपेक्षा की। इसके अतिरिक्त इस शिक्षा के लाभभोगी अधिकतर समाज के उच्च वर्ग के थे। इसलिए अंग्रेजी शिक्षा के द्वारा हुए परिवर्तन बहुत सीमित थे।

1.8 शब्दावली

आंग्लवादी : कम्पनी के अधिकारी जो भारतीयों में पश्चिमी शिक्षा के प्रोत्साहन के पक्ष में थे, आंग्लवादी कहलाते थे।

इवैन्जेलिकल : इंग्लैण्ड में प्रोटेस्टैण्टों का एक समूह था जो क्राइस्ट की श्रेष्ठता और व्यक्तिगत पहलों पर विश्वास करता था। उन्होंने केवल क्राइस्ट और क्रिश्चियन संस्कृति में विश्वास द्वारा मानव जाति की प्रगति की सजीव कल्पना की थी।

लिबरल (उदारवादी) : उन्नीसवीं शताब्दी में इंग्लैण्ड में एक नए राजनीतिक दल का आविर्भाव हुआ। इस दल के सदस्य, जो लिबरल (उदारवादी) कहलाते थे, सहनशीलता में विश्वास करते थे और विचारों तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की वकालत करते थे।

प्राच्यवादी : कम्पनी के अधिकारी, जिन्होंने भारतीय संस्कृति, परम्परा और भाषा के प्रोत्साहन की वकालत की, प्राच्यवादी कहलाते थे।

1.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1.1

1) स्थानीय धनी व्यक्तियों द्वारा चलाए गए मदरसे, मकतब भाषा आधारित पाठ्यक्रम, मौखिक परम्परा तथा महिलाएँ और निचली जाति बहिष्कृत

   पतनः जाति प्रथा, भारतीय औद्योगिक क्रांति की विफलता, कट्टरवादिता, अधिकारवादी।

2) आंग्लवादीः भारतीय पिछड़े, पश्चिमी और अंग्रेज़ी शिक्षा आवश्यक परंतु केवल छोटे से वर्ग के लिए।

   प्राच्यवादीः भारतीय परंपरागत परम्परा को प्रोत्साहन क्योंकि भारतीय पश्चिम ज्ञान को अस्वीकार कर सकते थे।

3) i) × ii) √ iii) √ iv) ×

बोध प्रश्न 1.2

1) पश्चिमी शिक्षा पर अधिक बल, यूरोपीय साहित्य और विज्ञान का प्रोत्साहन, विश्वविद्यालयों की स्थापना।

2) उपनिवेशी शासन का सुदृढ़ीकरण, छोटे से वर्ग तक सीमित शिक्षा – न कि जनसाधारण तक। इस प्रणाली द्वारा तैयार लोग प्रारंभिक वर्षों में अंग्रेजों के प्रति वफादार थे।

1.10 उपयोगी पठन सामग्री

अग्रवाल, जे.सी. (2009). डेवलपमेंट ऑफ एजुकेशन सिस्टम इन इन्डिया, नई दिल्लीः शिप्रा प्रकाशन

आल्तेकर, ए.एस. (1944). एजुकेशन इन एनसिमेंट इन्डिया (द्वितीय संस्करण) वाराणसीः इन्डियन बुक शॉप

वासु, ए. (1974). द ग्रोथ ऑफ एजुकेशन एंड पालीटिकल डेवलपमेंट इन इन्डिया – 1898–1920, नई दिल्लीः आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस।

वासु, बी.डी. (1989). हिस्ट्री ऑफ एजुकेशन इन इन्डिया, नई दिल्लीः कॉसमो पब्लिकेशन

धर्मपाल (1983). द ब्यटीफुल ट्रीः इंडीजिनस इन्डियन एजुकेशन इन द एटीन्थ सेंन्चुरी, नई दिल्लीः विवलिया इम्पैक्स

कुमार, कृष्ण. (1991). द पॉलिटिकल एजेंडा ऑफ एजुकेशन, नई दिल्लीः सेज पब्लिकेशन

नरूला, एस. एवं नायक, जे.पी. (1974). ए स्टूडेंट हिस्ट्री ऑफ एजुकेशन इन इन्डिया (1800–1973). छठा संस्करण, नई दिल्लीः मैकमिलन इन्डिया

ठाकुर, ए.एस. एवं वरबौल, एस. (2008). डेवलपमेंट ऑफ एजुकेशन सिस्टम इन इन्डिया, नई दिल्लीः शिप्रा पब्लिकेशन